हज़रत फातिमा ज़हरा स0
इबादत व रियाज़त का बेमिसाल नमूना

हाफ़िज़ मौलाना सै0 ख़ुरशीद अली रिज़वी साहब
फ़ाज़िल जामिआ इमामिया तनज़ीमुल मकातिब, लखनऊ

पैग़म्बरे इस्लाम (स0) ने जनाबे सलमान से फरमायाः ऐ सलमान! ख़ुदावन्दे आलम ने मेरी बेटी फातिमा (स0) के दिल और बदन के हिस्सों को ईमान से भर दिया है और उसके दिल में ईमान इतना उतर गया है कि वह अपने ख़ुदा की इबादत हर चीज़ पर मुक़द्दम रखती है।

(बहारुल अनवारः जि–43 पे–64)

दूसरी जगह पर अपनी लख़्तेजिगर के तरीफ में फरमाते हैंः

जब मेरी बेटी फातिमा (स0), मेहराबे इबादत में ख़ुदा के सामने खड़ी होती है तो उसका नूर आसमानी फरिश्तों के लिए ऐसे ही चमकता है जिस तरह ज़मीन वालों के लिए सितारे चमकते हैं। और ख़ुदावन्दे आलम फरिश्तों से ख़िताब करता हैः ऐ मेरे फरिश्तों मेरी कनीज़ और मेरी कनीज़ों की सरदार फातिमा (स0) को देखो किस तरह मेरे सामने खड़ी है, उसका बदन मेरे ख़ौफ से काँप रहा है और वह अपने मुकम्मल वजूद के साथ मेरी इबादत में लगी है। तुम्हें गवाह बनाता हूँ कि मैंने उसकी पैरवी करने वालों और शीओं को जहन्नम की आग से अमान दे दी।

(बहारुल अनवारः जि–43 पे–172)

इमामे हसन मुजतबा (अ0) फरमाते हैंः एक जुमे की रात मैंने अपनी माँ को सुब्ह तक इबादते ख़ुदा में मशग़ूल पाया। आप बराबर सुब्ह तक रुकू व सिज्दे करती रहीं और नमाज़ में मोमिनीन के लिए नाम बनाम दुआए ख़ैर करती रहीं और अपने लिए एक बार भी दुआ नहीं फरमायी। मैंने अर्ज़ की मादरे ग्रामी! आप अपने लिये दुआ क्यों नहीं करतीं? आप (स0) ने फरमायाः पहले पड़ोसी फिर ख़ुद।

(कश्फ़ुल गुम्महः जि–2 पे–94)

फातिमा (स0) बेहतरीन बीवी

फातिमा पैग़म्बरे इस्लाम (स0) की बेटी, जिगर का टुकड़ा, आखों का नूर होने के बावजूद दूसरी बावफा बीवियों की तरह अपने शौहर की ख़िदमत करतीं और घर की तमाम ज़िम्मेदारियाँ निभातीं, बल्कि इस सिलसिले में भी उनकी मिसाल नहीं मिलती।

इमामे सादिक़ (अ0) फरमाते हैंः पैग़म्बरे इस्लाम (स0) ने घर के कामों को जनाबे फातिमा (स0) के हवाले किया और बाहर के कामों की ज़िम्मेदारी जनाबे अमीर के सुपुर्द की। जनाबे फातिमा (स0) ज़िन्दगी के तमाम ख़ुशी के लम्हे, ग़म, मुसीबतों और दर्द व परेशानियों में अली (अ0) के कन्धे से कन्धा मिलाकर रहीं। फातिमा (स0) ने ग़रीबी और परेशानी के हालात का बड़ी हिम्मत और बर्दाश्त व नर्मी से मुक़ाबला किया। सिर्फ आप ही अली (अ0) के हमसर थीं और घरदारी में आपकी कोई मिसाल न थी।

(बहारुल अनवारः जि–43 पे–81)

अली (अ0) फरमाते हैंः मैंने कभी कोई

ऐसा काम नहीं किया जिससे जनाबे फातिमा (स0) नाराज़ हों और उन्होंने भी मुझे कभी नाराज़ नहीं किया।[1] एक दूसरी रिवायत में फरमायाः जब मैं घर लौटता था और हज़रत ज़हरा (स0) पर मेरी निगाह पड़ती थी तो मेरी थकावट और तमाम ग़म दूर हो जाते।[2] एक मुसलमान ख़ातून को इसी तरह ख़ुश अख़लाक़ी और मुहब्बत का मुज़ाहेरा करना चाहिए ताकि दिन भर के थके माँदे शौहर को सुकून व हौसला दे सके और दूसरी तरफ मर्द भी औरत को कनीज़ न समझे कि घर के सख़्त से सख़्त काम भी कन्धों पर डाल दे और छोटी–छोटी चीज़ों में बुराई निकाले, एतेराज़ करे और बद अख़लाक़ी से पेश आए।

(1)वाफी, किताबुन्निकाहःपे–114

(2)मनाक़िबे ख़्वारज़मीः पे–256)

फातिमा (स0) ने अपने बुज़ुर्ग बाप हज़रत रसूले ख़ुदा से रिवायत की है कि आपने फरमायाः तुम में से बेहतरीन मर्द वह हैं जो अपनी बीवियों से बहुत ज़्यादा नेकियों और मुहब्बतों से पेश आते हैं। इसलिए अली (अ0), फातिमा (स0) से सिर्फ ख़ुशअख़लाक़ी ही से पेश नहीं आते थे बल्कि वह उन्हें कभी नाराज़ भी नहीं होने देते थे और घरेलू कामों में हमेशा उनकी मदद करते थे।

इमामे सादिक़ (अ0) फरमाते हैं कि अमीरुलमोमिनीन (अ0) बाहर से ईंधन, पानी लाते और घर की सफाई करते और जनाबे फातिमा आटा पीसतीं और उसे गूँधकर रोटी पकातीं।

(बहारुल अनवारः जि–43 पे–151)

हज़रते फातिमा ज़हरा (स0) और बच्चों की तरबियत

किताब ज़ख़ाएरुल उक़बा में ज़िक्र हुआ है कि एक दिन बिलाल अज़ान के लिए कुछ देर से मस्जिद पहुँचे। पैग़म्बरे इस्लाम (स0) ने पूछा आज देर क्यों हो गई? अर्ज़ कीः फातिमा के घर की तरफ से गुज़र रहा था। आप बैठी चक्की चला रही थीं और उनके बच्चे के रोने की आवाज़ आ रही थी। मैंने कहा उनमें से कोई एक काम मुझे दे दीजिये, तो आपने फरमाया अगर मेरी मदद करना चाहते हो तो चक्की चलाओ क्योंकि मैं बच्चे को बेहतर तरीक़े से बहला सकती हूँ। इसी वजह से मस्जिद आने में देर हो गई। हज़रत ने फरमाया : तुमने फातिमा (स0) पर रहम किया ख़ुदावन्दे आलम तुम पर रहम करे।

इस हदीस से पता चलता है कि बच्चों की तरबियत आसान काम नहीं है और यह अहम काम भी औरतों की ज़िम्मेदारी है। बच्चे की तरबियत उसके खाने और कपड़े पर ध्यान और उसकी माद्दी ज़रूरतें पूरी करने पर नहीं टिकी है बल्कि इससे ऊपर उसकी सही तरबियत और फिक्री परवरिश है। बच्चों की तरबियत में बहुत से मसाएल की तरफ ध्यान ज़रूरी है। मसलन मियाँ–बीवी के ताल्लुक़ात इस तरह के होने चाहिएँ कि बच्चों पर उसका बुरा असर न पड़े। बच्चों के साथ मुहब्बत के मौक़े पर मुहब्बत व नवाज़िश से पेश आना चाहिए और डाँट–डपट के वक़्त डाँट–डपट की जानी चाहिए। हमेंशा उन्हें उनकी अपनी शख़सियत का एहसास दिलाना चाहिए। ज़रूरी है कि दूसरों के सामने उनका एहतेराम ध्यान में रखें ताकि उनकी शख़सियत में किसी तरह का झोल न आने पाए। और उनसे किसी वक़्त भी झूठी बातों का वादा न करें। बच्चों की सैर व तफरीह के लिए भी एक वक़्त तैय करें। और सबसे अहम चीज़ यह है कि बचपने ही से बच्चे को दीन के उसूल और मसाएल से आगाह करें। और यह सारी बातें

जनाबे ज़हरा (स0) के घर में बख़ूबी अन्जाम पा रही थीं। एक रिवायत में है कि जब फातिमा (स0) हसन को खिलाती और ऊपर उछालती थीं तो उस वक़्त उन्हें बहादुरी और बड़ाई का सबक़ भी देती जाती थीं, फरमाती थीं:

''ऐ हसन (अ0) अपने बाप जैसे बनो और हक़ की गर्दन से क़ैद के बंधन खोल दो और एहसान करने वाले ख़ुदा की इबादत व परस्तिश करो और हरगिज़ कीना रखने वालों से दोस्ती न करो।'' (बहारुल अनवारः जि–43 पे–286)

हज़रत फातिमा ज़हरा (स0) ज़िन्दगी के तमाम मौक़ों पर इस्लामी समाज की औरतों और मर्दों के लिए एक बेमिसाल नमूना हैं। आपने मर्दों को तक़्वे और ईमान का सबक़ दिया है और औरतों को शौहर की ख़िदमद, बच्चों की सही तरबियत और इस्लामी पर्दे की रिआयत का बेमिसाल सबक़ दिया है।

लेकिन यह निहायत अफसोसनाक हक़ीक़त है कि जनाबे ज़हरा (स0) को उनकी तमाम अज़मत व बुज़ुर्गी की बावजूद और उनके बारे पैग़म्बरे इस्लाम की सिफारिशात यानीः

फातिमा (स0) मेरा टुकड़ा है, जिसने इसे तकलीफ दी उसने मुझे तकलीफ दी और जिसने मुझे तकलीफ दी उसने ख़ुदा को नाराज़ किया, के बावजूद उम्मत ने उनके हुक़ूक़ को भुला दिया और पैग़म्बर (स0) की वसिय्यतों और नसीहतों को नज़र अन्दाज़ करके हुज़ूर की इकलौती बेटी को वहशियाना तकलीफें देकर शहीद कर दिया और फातिमा (स0) ग़म व तकलीफ से लबरेज़ दिल और ज़ख़्मों से चूर–चूर बदन के साथ अपने बुज़ुर्ग बाप की मुलाक़ात के लिए रवाना हुईं ताकि अपने बाप से लोगों रवैय्ये की शिकायत करें और उन मुसीबतों और परेशानियों के बाद जन्नत में अपने बुज़ुर्ग बाप के साथ हमेशा की ज़िन्दगी बसर कर सकें। (सहीह् मुस्लिमः जि–4 पे–103)

□□□

बक़िया.........मशोरे की अहमियत इस्लामी नुक़त–ए–नज़र से

इम्तियाज़ी निशान और उसकी लाज़मी ख़ुसूसियत है। एक हदीस में इरशाद हुआ है कि जब तुमसे तुम्हारा कोई भाई मशोरा करे तो तुम उसको भली बात का मशोरा दो यानी मशोरे के इस इन्सानी हक़ के तामीरी अन्दाज़ को छोड़कर उसे किसी तरह के भी ख़राब अन्दाज़ के लिए इस्तेमाल न करो और जब मशोरे का काम अपनी सही और ठीक बुनियादों पर मुकम्मल हो जाए तो फिर पूरे भरोसे और यक़ीन और जज़्ब–ए–अमल के साथ उस काम को अन्जाम दो और ख़ुदा पर भरपूर भरोसा रखो। ग़र्ज़ अहलियत रखने वालों से मशोरा करना मुसलमानों की इस्लामी निशानी है और किसी को राए देना एक ऐसी अमानत को अदा करना है जिसमें किसी तरह भी धोके का देना किसी मुसलमान के लिए कभी जायज़ नहीं हो सकता। आपसी मशोरा और एक साथ, कारोबारी और समाजी बल्कि इन्सानी ज़िन्दगी के हर हिस्से में आपसी कामियाबी के लिए एक बड़ी बुनियाद और बहुत ही अहम ज़मानत और बड़ा मज़बूत रास्ता और सरमाया है।

□□□